इ०—आने दो अच्छे अवसर पर आए।

द्वा०—जो आज्ञा। (जाता है)।

इ०—(आप ही आप) नारद जी सारी पृथ्वी पर इधर उधर फिरा करते हैं, इनसे सब बातों का पक्का पता लगेगा। हमने माना कि राजा हरिश्चन्द्र को स्वर्ग लेने की इच्छा न हो तथापि उसके धर्म्म की एक बेर परीक्षा तो लेनी चाहिए।

(नारद जी आते हैं। *)

इ०—(हाथ जोड़ कर दण्डवत करता है) आइये, आइये, धन्य भाग्य, आज किधर भूल पड़े ?

ना०—हमें और भी कोई काम है ? केवल यहाँ से वहाँ और वहाँ से यहाँ, यही हमें है कि और भी कुछ।

इ०—साधु स्वभाव ही से परोपकारी होते हैं, विशेष कर के आप ऐसे, जो हमारे से दीन गृहस्थों को घर बैठे दर्शन देते हैं, क्योंकि जो लोग गृहस्थ और कामकाजी हैं वे स्वभाव ही से गृहस्थी के बन्धनों से ऐसे जकड़ जाते हैं कि साधु संग तो उनको सपने में भी दुर्लभ हो जाता है, न वे अपने प्रबन्धों से छुट्टी पावेंगे न कहीं जायँगे।

ना०—आपको इतना शिष्टाचार नहीं सोहता। आप देवराज हैं और आपके संग की तो बड़े बड़े ऋषि मुनि इच्छा

---

* धोती की लाँग कसे, गाती बांधे, सिर से पांव तक चन्दन का खौर दिये, पैर में घुँघरू, सिर के बाल छुटे और हाथ में बीन लिए हुए आने और जाने के समय "रामकृष्ण गोविन्द" की ध्वनि नैपथ्य में से हो।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

करते हैं, फिर आपको सत्संग कौन दुर्लभ है ? केवल जैसा राजा लोगों में एक सहज मुँह देखा व्यापार होता है वैसी ही बातें आप इसे समय कर रहे हैं।

इ०—हमको बड़ा शोच है कि आपने हमारी बातों को शिष्टाचार समझा। क्षमा कीजिये। आपसे हम बनावट नहीं करते। भला विराजिये तो सही. ये बातें तो होती ही रहेंगी।

ना०-बिराजिये। (दोनों बैठते हैं)।

इ०—कहिये इस समय कहाँ से आना हुआ ?

ना०—अयोध्या से, अहा ! राजा हरिश्चन्द्र धन्य है। मैं तो उसके निष्कपट और अकृत्रिम स्वभाव से बहुत ही संतुष्ट हुआ। यद्यपि इसी सूर्य्यकुल में अनेक बड़े बड़े धार्मिक हुए पर हरिश्चन्द्र तो हरिश्चन्द्र ही है।

इ०—(आप ही आप) यह भी तो उसीका गुण गाते हैं।

ना०—महाराज। सत्य की तो मानो हरिश्चन्द्र मूर्ति है। निस्सन्देह ऐसे मनुष्यों के उत्पन्न होने से भारतभूमि का सिर केवल इनके स्मरण से उस समय भी ऊंचा रहेगा जब यह पराधीन हो कर हीनावस्था को प्राप्त होगी।

इ०—(आप ही आप) अहा ! हृदय भी ईश्वर ने क्या ही वस्तु बनाई है। यद्यपि इसका स्वभाव सहज ही गुण-ग्राही हो तथापि दूसरों की उत्कट कीर्त्ति से इसमें ईर्षा होती है, उसमें भी जो जितने बड़े हैं उनकी ईर्षा उतनी ही बड़ी है। हमारे ऐसे बड़े पदाधिकारियों को शत्रु उतना सन्ताप नहीं देते जितना दूसरों की सम्पत्ति और कीर्त्ति।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

रा०—महाराज ! स्वप्न के शुभाशुभ का विचार कुछ महाराज ने भी ग्रन्थों में देखा है ?

ह०—(रानी की बात अनसुनी कर के) स्वप्न तो कुछ हमने भी देखा है (चिन्तापूर्वक स्मरण कर के) हाँ, यह देखा है कि एक क्रोधी ब्राह्मण विद्या साधन करने को सब दिव्य महाविद्याओं को खींचता है और जब मैं स्त्री जान कर उनको बचाने गया हूँ तो वह मुझी से रुष्ट हो गया है और फिर जब बड़े विनय से मैंने उसे मनाया है तो उसने मुझ से मेरा सारा राज्य माँगा है। मैंने उसे प्रसन्न करने को अपना सब राज्य दे दिया।

(इतना कह कर अत्यन्त व्याकुलता नाट्य करता है)

रा०—नाथ ! आप एक साथ ऐसे व्याकुल क्यों हो गए?

ह०—मैं यह सोचता हूँ कि अब उस ब्राह्मण को कहाँ पाऊँगा और बिना उसकी थाती उसे सौंपे भोजन कैसे करूँगा ?

रा०—नाथ ! क्या स्वप्न के व्यवहार को भी आप सत्य मानिएगा ?

ह०—प्रिये ! हरिश्चन्द्र की अर्द्धाङ्गिनी हो कर तुम्हें ऐसा कहना उचित नहीं है। हा ! भला तुम ऐसी बात मुँह से निकालती हो ? स्वप्न किसने देखा है ? मैंने न ? फिर क्या ? स्वप्न संसार अपने काल में असत्य है इसका कौन प्रमाण है, और जो अब असत्य कहो तो मरने के पीछे तो इस संसार में परलोक के हेतु लोग धर्माचरण क्यों करते हैं ? दिया सो दिया, क्या स्वप्न में क्या प्रत्यक्ष !

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

रा०—(हाथ जोड़ कर) नाथ ! क्षमा कीजिये, स्त्री की बुद्धि ही कितनी।

ह०—(चिन्ता कर के) पर मैं अब करूँ क्या ? अच्छा प्रधान, नगर में डौंड़ी पिटवा दो कि राज्य को सब लोग आज से अज्ञात-नाम-गोत्र ब्राह्मण का समझें, उसके अभाव में हरिश्चन्द्र उसके सेवक की भाँति उसकी थाती समझ के राजकार्य करेगा और दो मुहर राजकाज के हेतु बनवा लो। एक पर अज्ञात-नाम-गोत्र ब्राह्मण सेवक हरिश्चन्द्र और दूसरे पर राजाधिराज अज्ञात नाम गोत्र ब्राह्मण महाराजा खुदा रहे और आज से राजकाज के सब पत्रों पर भी यही नाम रहे। देश के राजाओं और बड़े बड़े कार्य्याधीशों को भी आज्ञा-पत्र भेज दो कि महाराज हरिश्चन्द्र ने स्वप्न में अज्ञात-नाम गोत्र ब्राह्मण को पृथ्वी दी है, इससे आज से उसका राज्य हरिश्चन्द्र मंत्री की भाँति सम्हालेगा !

(द्वारपाल आता है)

द्वा०—महाराजाधिराज ! एक बड़ा क्रोधी ब्राह्मण दरवाजे पर खड़ा है और व्यर्थ हम लोगों को गाली देता है।

ह०—(घबड़ा कर) अभी आदर पूर्वक ले आओ।

द्वा०—जो आज्ञा। (जाता है)

ह०—यदि ईश्वरेच्छा से यह वही ब्राह्मण हो तो बड़ी बात है।

(द्वारपाल के साथ विश्वामित्र * आते हैं)

---

* जटा और डाढ़ी बढ़ाए, खड़ाऊँ पहिने, गले में मृगछाला बांधे, धोती पर बाघ की मोटी करधनी, एक हाथ में कुश और कमंडल।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

जेहि पा(क आगे से ले कर और प्रणाम कर के) महा-
ताहि देत ारिए, यह आसन है ।
वसुधे ! बैठे । बैठ चुके, बोल अभी तैंने मुझे पहिचाना
?
धरमबद्ध

वि०—(आ ा कर) महाराज ! पूर्वपरिचित तो आप ज्ञात होते हैं ।
तो मे (ध से) सच है रे क्षत्रियाधम ! तू काहे को पहि-
छोड़ ा, सच है रे सूर्य्यकुलकलंक, तू क्यों पहिचानेगा,
अ ार तेरे मिथ्याधर्म्माभिमान को । ऐसे ही लोग पृथ्वी
ह०— ो अपने बोझ से दबाते हैं । अरे दुष्ट तैं भूल गया, कल
पृथ्वी किसको दान दी थी ? जानता नहीं कि मैं कौन हूँ?

"जातिस्वयंग्रहणदुर्ललितैकविप्रं ।
दृप्यद्वशिष्ठसुतकाननधूमकेतुम् ।।
सर्गान्तराहरणभीतजगत्कृतान्तं ।
चाण्डालयाजिनमवैषि न कौशिकं माम् ।।"

ह०—(पैरों पर गिर के बड़े विनय से) महाराज ! भला आप को त्रैलोक्य में ऐसा कौन है जो न जानेगा ?

"अन्नक्षयादिषु तथा विहितात्मवृत्तिं ।
राज्यप्रतिग्रहपराङ्मुखमानसं त्वाम् ।।
आडीवकप्रधनकम्पितजीवलोकं ।
कस्तेजसां च तपसां च निधिर्न वेत्ति ।।

वि०—(क्रोध से) सच है रे पाप पाषंड, मिथ्यादान वीर ! तू क्यों न मुझे "राजप्रतिग्रहपराङ्मुख" कहेगा क्योंकि तैंने तो कल सारी पृथ्वी मुझे दान न दी है । ठहर, ठहर देख इस झूठ का कैसा फल भोगता है । हा ! इसे देखकर

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

क्रोध से जैसे मेरी दहिनी भुजा शाप ॰॰, स्त्री की बुद्धि वैसे ही जाति स्मरण के संस्कार से वां॰ कृपाण ग्रहण किया चाहती है. (अत्यन्त अच्छा प्रधान, साँस लेकर और बांह उठा कर) अरे ॰॰ लोग आज अपनी सृष्टि को, नहीं तो परम तेजःपुञ्ज द॰के अभाव में मेरे आज इस असह्य क्रोध से सारा संसा॰ समझ के जायगा। अथवा संसार के नाश ही से क्या ॰॰ु वनवा तो गर्व्व उसी दिन मैंने चूर्ण किया जिस दि॰रिश्चन्द्र सृष्टि बनाई, आज इस राजकुलांगार का अभिमा॰ाह्मण करूँगा जो मिथ्या अहंकार के बल से जगत् में द॰ाँ प्रसिद्ध हो रहा है।

ह०—(पैरों पर गिर के) महाराज! क्षमा कीजिए मैंने इस बुद्धि से नहीं कहा था। सारी पृथ्वी आपकी, मैं आपका, भला आप ऐसी क्षुद्र बात मुँह से निकालते हैं। (ईषत्-क्रोध से) और आप बारम्बार मुझे झूठा न कहिए। सुनिये मेरी यह प्रतिज्ञा है।

"चन्द टरै सूरज टरै, टरै जगत ब्योहार।
पै दृढ़ श्री हरिचन्द को, टरै न सत्य विचार॥"

वि०—(क्रोध और अनादरपूर्व्वक हँस कर) हहहह! सच है। सच है रे मूढ़। क्यों नहीं, आखिर सूर्य्यवंशी है। तो दे हमारी पृथ्वी।

ह०—लीजिये इसमें विलम्ब क्या है? मैंने तो आपके आगमन के पूर्व्व ही से अपना अधिकार छोड़ दिया है (पृथ्वी की ओर देख कर)

CC-0.Courtesy Gov[redacted]nt District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

जेहि पाली इक्ष्वाकु सों, अब लौं रविकुलराज।
ताहि देत हरिचन्द नृप, विश्वामित्रहिं आज॥
बसुधे! तुम बहु सुख कियो, मम पुरुषन की होय।
धरमबद्ध हरिचन्द को क्षमहु सु परबस जोय॥

वि०—(आप ही आप) अच्छा! अभी अभिमान दिखा ले; तो मेरा नाम विश्वामित्र जो तुझको सत्यभ्रष्ट कर के छोड़ा और लक्ष्मी से तो हो ही चुका है। (प्रगट) स्वस्ति! अब इस महादान की दक्षिणा कहाँ है?

ह०—महाराज! जो आज्ञा हो वह अभी आती है।

वि०—भला सहस्र स्वर्णमुद्रा से कम इतने बड़े दान की दक्षिणा क्या होगी?

ह०—जो आज्ञा (मंत्रीसे) मंत्री! हजार स्वर्णमुद्रा अभी लाओ

वि०—(क्रोध से) "मंत्री हजार स्वर्णमुद्रा अभी लाओ" मंत्री कहाँ से लावेगा? क्या अब खजाना तेरा है? झूठा कहीं का, देना ही नहीं था तो मुँह से कहा क्यों? चल मैं नहीं लेता ऐसे मनुष्य की दक्षिणा!

ह०—(हाथ जोड़ कर विनय से) महाराज ठीक है। खज़ाना अब सब आपका है। मैं भूला, क्षमा कीजिए। क्या हुआ खजाना नहीं है तो मेरा शरीर तो है।

वि०—एक महीने में जो मुझे दक्षिणा न मिलेगी तो मैं तुझ पर कठिन ब्रह्मदंड गिराऊँगा। देख, केवल एक मास की अवधि है।

ह०—महाराज! मैं ब्रह्मदंड से उतना नहीं डरता जितना सत्यदंड से। इस से—

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

बेचि देह दारा सुअन, होइ दास हू मन्द ।
रखिहै निज बच सत्य करि, अभिमानी हरिचन्द ॥
(आकाश से फूल की वृष्टि और बाजे
के साथ जयध्वनि होती है ।
जवनिका गिरती है)
इति दूसरा अंक ।

तीसरे अंक में अंकावतार ।

स्थान वाराणसी का बाहरी प्रान्त-तालाब ।

(* पाप आता है)

पा०—(इधर उधर दौड़ता और हाँपता हुआ) मरे रे मरे, जले रे जले, कहाँ जाँय, सारी पृथ्वी तो हरिश्चन्द्र के पुण्य से ऐसी पवित्र हो रही है कि कहीं हम ठहर ही नहीं सकते। सुना है कि राजा हरिश्चन्द्र काशी गये हैं क्योंकि दक्षिणा के वास्ते विश्वामित्र ने कहा कि सारी पृथ्वी तो हमको तुमने दान दे दी है इससे पृथ्वी में जितना धन है सब हमारा हो चुका और तुम पृथ्वी में कहीं भी अपने को बेच कर हम से उऋण नहीं हो सकते। यह बात जब हरिश्चन्द्र ने सुनी तो बहुत ही घबड़ाये और सोच विचार कर उन्होंने कहा कि बहुत अच्छा! महाराज हम काशी में अपना शरीर बेचेंगे क्योंकि शास्त्रों में मिला है कि काशी पृथ्वी

---

* काजल सा रंग, लाल नेत्र, महाकुरूप, हाथ में नंगी तलवार लिये, नीला काछा काछे ।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

के बाहर शिव के त्रिशूल पर है। यह सुन कर हम भी दौड़े कि चलो हम भी काशी चलें क्योंकि जहाँ हरिश्चन्द्र का राज्य न होगा वहाँ हमारे प्राण बचेंगे, सो यहाँ और भी उत्पात हो रहा है। जहाँ देखो वहाँ स्नान पूजा, जप पाठ, दान धर्म, होम इत्यादि में लोग ऐसे लगे रहते हैं कि हमारी मानो जड़ ही खोद डालेंगे। रात दिन शंख घंटे की घनघोर के साथ वेद की धुनि मानो ललकार ललकार के हमारे शत्रु धर्म्म की जय मनाती है और हमारे ताप से कैसा भी मनुष्य क्यों न तपा हो, भगवती भागीरथी के जलकण मिले वायु से उसका हृदय एक साथ ही शीतल हो जाता है। इसके उपरान्त शि शि शि ···· ध्वनि अलग मारे डालती है। हाय ! कहाँ जाँय, क्या करें ! हमारी तो संसार से मानो जड़ ही कटी जाती है, भला और जगह तो कुछ हमारी चलती भी है पर यहाँ तो मानो हमारा राज ही नहीं। कैसा भी बड़ा पापी क्यों न हो यहाँ आया कि गत भई !

(नेपथ्य में)

सच है "येषां क्वापि गतिर्नास्ति तेषां वाराणसी गतिः"

पा —अरे रे ! कौन महा भयंकर भेष, अंग में भभूत पोते, एड़ी तक जटा लटकाए, लाल लाल आँख निकाले, साक्षात् काल की भाँति त्रिशूल घुमाता चला आता है। प्राण तुम्हें जो अपनी रक्षा करनी हो तो भागो पाताल में। अब इस समय भूमंडल में तुम्हारा ठिकाना लगना कठिन ही है।

(भागता हुआ जाता है)

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

(* भैरव आते हैं)

भैरव—सच "येषां क्वापि गतिर्नास्ति तेषां वाराणसी गतिः" देखो इतना बड़ा पुण्यशील राजा हरिश्चन्द्र भी अपनी आत्मा और स्त्री पुत्र बेचने को यहीं आया है। अहा! धन्य है सत्य। आज जब भगवान् भूतनाथ राजा हरिश्चन्द्र का वृत्तान्त भवानी से कहने लगे तो उनके तीनों नेत्र अश्रु से पूर्ण हो गये और रोमांच होने से सब शरीर के भस्मकण अलग अलग हो गये। मुझको आज्ञा भी हुई है कि अलक्ष रूप से तुम सर्वदा राजा हरिश्चन्द्र की अंगरक्षा करना। इससे चलूँ मैं भी भेस बदल कर भगवान् की आज्ञा पालन में प्रवृत्त हूँ।

(जाते हैं, जवनिका गिरती है।)

तीसरे अंक में यह अंकावतार समाप्त हुआ।

—*—

तीसरा अंक।

(स्थान—काशी के घाट किनारे की सड़क)

(महाराज हरिश्चन्द्र घूमते हुए दिखाई पड़ते हैं।)

ह०—देखो काशी भी पहुँच गये! अहा! धन्य है काशी! भगवति वाराणसी। तुम्हें अनेक प्रणाम हैं। अहा! काशी की कैसी अनुपम शोभा है।

* महादेव जी का सा सिंगार, तीन नेत्र, नीला रंग, एक हाथ में त्रिशूल, दूसरे में प्याला।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

"चारहु आश्रम वर्न वसैं, मनि कंचन धाम अकाश विभासिका। सोभा नहीं कहि जाय कछू विधि नै रची मानो पुरीन की नासिका। आपु बसै गिरिधारन जू तट देव नदी वर वारि विलासिका। पुन्य प्रकासिका पाप विनासिका हीय हुलासिका सोहत कासिका ॥ १ ॥"

बसैं बिंदुमाधव बिसेसरादि देव सबै दरसन ही तें लागै जम मुख मसी है। तीरथ अनादि पंचगंगा मनिकर्निकादि सात आवरण मध्य पुन्य रूप धंसी है॥ गिरिधरदास पास भागीरथी सोभा देत जाकी धार तीरै आसु कर्म्म रूप रसी है। ससी सम जसी असी वरना में वसी-पाप खसी हेतु असी ऐसी लसी वाराणसी है ॥ २ ॥"

'रचित प्रभासी भासी अवलि मकानन की जिन मैं अकासी फवै रतन नकासी है। फिरैं दास दासी विप्र गृही औ संन्यासी लसै वर गुनरासी देवपुरी हूँ न जासी है। गिरिधर दास विस्व कीरति विलासी रमा हासी लौं उजासी जाकी जगत हुलासी है। खासी परकासी पुनवासी चन्द्रिकासी जाके बासी अविनासी अघनासी ऐसी कासी है ॥ ३ ॥

देखो ? जैसा ईश्वर ने यह सुन्दर अंगूठी के नगीने सा नगर बनाया है वैसी ही नदी भी इसके लिये दी है। धन्य गंगे!

"जम की सब त्रास विनास करी मुख ते निज नाम उच्चारन में। सव पाप प्रतापहि दूर बस्यौ तुम आपन आप निहारन

---

* ये चारों कवित्त ग्रन्थकर्ता के पिता श्री बाबू गोपालचन्द्र के बनाये हैं ये कविता में अपना नाम गिरिधरदास रखते थे।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

में। अहो गंग अनंग के शत्रु करे बहु नेकु जलै मुख डारन में।
गिरिधारन जू कितने बिरचे गिरधारन धारन धारन में ॥४॥"
कुछ महात्म्य ही पर नहीं, गंगाजी का जल भी ऐसा ही उत्तम और मनोहर है ! अहा !

नव उज्वल जलधार हार हीरक सी सोहति।
बिच बिच छहरति बूँद मध्य मुक्तामनि पोहति॥
लोल लहर लहि पवन एक पैं इक इमि आवत।
जिमि नरगन मन बिविध मनोरथ करत मिटावत॥
सुभग स्वर्ग सोपान सरिस सब के मन भावत।
दरसन मज्जन पान त्रिविध भय दूर मिटावत॥
श्री हरिपद नष चन्द्रकान्ति मनि द्रवित सुधारस।
ब्रह्म कमंडल मंडन भव खंडन सुर सरवस॥
शिव सिर मालतिमाल भगीरथ नृपति पुन्य फल।
ऐरावत गजगिरि पति हिम नग कंठहार कल॥
सगर सुवन सठ सहस परस जल मात्र उधारण।
अगिनित धारा रूप धारि सागर संचारण॥
काशी कहँ प्रिय जानि ललकि भेट्यो जग धाई।
सपनेहूं नहिं तजी रही अंकम लपटाई॥
कहूं बँधे नव घाट उच्च गिरिवर सम सोहत।
कहुं छतरी कहुं मढ़ी बढ़ी मन मोहत जोहत॥
धवल धाम चहुं ओर फरहरत धुजा पताका।
घहरत घंटा धुनि धमकत धौंसा करि साका॥
मधुरी नौबत बजत कहूं नारी नर गावत।
वेद पढ़त कहुं द्विज कहुं जोगी ध्यान लगावत॥

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

कहुं सुन्दरी नहात नीर कर जुगल उछारत ।
जुग अंबुज मिलि मुक्त गुच्छ मनु सुच्छ निकारत ॥
धोअत सुन्दरि वदन करन अति ही छबि पावत ।
वारिधि नाते ससि-कलंक मनु कमल मिटावत ॥
सुन्दरि ससि मुख नीर मध्य इमि सुन्दर सोहत ।
कमल बेलि लहलही नवल कुसुमन मन मोहत ॥
दीठि जहीं जहँ जात रहत तितही ठहराई ।
गंगा छवि हरिचन्द कछू बरनी नहिं जाई ॥

(कुछ सोच कर) पर हा ! जो अपना जी दुखी होता है तो संसार सूना जान पड़ता है—

असनं वसनं वासो येषां चैवाविधानतः ।
मगधेन समा काशी गंगाप्यंगारवाहिनी ॥ *"

विश्वामित्र को पृथ्वी दान कर के जितना चित्त प्रसन्न नहीं हुआ उतना अब विना दक्षिणा दिये दुखी होता है । हा ! कैसे कष्ट की बात है, राज पाट, धन धाम, सब छूटा । अब दक्षिणा कहाँ से देंगे । क्या करें ! हम सत्य धर्म कभी छोड़ेंहींगे नहीं और मुनि ऐसे क्रोधी हैं कि विना दक्षिणा मिले शाप देने को तैयार होंगे और जो यह शाप न भी देंगे तो क्या ? हम ब्राह्मण का ऋण चुकाए विना शरीर भी तो नहीं त्याग सकते । क्या करें ? कुबेर को जीत कर धन लावें ? पर कोई शस्त्र भी

---

* जिन का भोजन, वस्त्र और निवास ठीक ठीक नहीं है उन को काशी भी मगध है और गंगा भी तपानेवाली है ।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

शरीर बेच कर दाक्षिणा देने का उपाय सोचें। हा ! ऋण भी कैसी बुरी वस्तु है। इस लोक में वही मनुष्य कृतार्थ है जिसने ऋण चुका देने को कभी क्रोधी और क्रूर लहन-दार की लाल लाल आँखें नहीं देखी हैं। (आगे चल कर) अरे क्या बाजार में आ गए, अच्छा (सिर पर तृण रख कर) * अरे सुनो भाई सेठ, साहूकार, महा-जन, दूकानदारो, हम किसी कारण से अपने को हजार मोहर पर वेचते हैं, किसी को लेना हो तो लो। (इसी तरह कहता हुआ इधर उधर फिरता है) देखो कोई दिन वह था कि किसी मनुष्य-विक्रय को अनुचित जान कर हम दूसरे को दण्ड देते थे पर आज वही कर्म हम आप करते हैं। दैव बली है। (अरे सुनो भाई इत्यादि कहता हुआ इधर उधर फिरता है ऊपर देख कर) क्या कहा ? "क्यों तुम एसा दुष्कर कर्म करते हो ?" आर्य्य, यह मत पूछो; यह सब कर्म की गति है। (ऊपर देख कर) क्या कहा ? "तुम क्या कर सकते हो, क्या समझते हो, और किस तरह रहोगे ?" इसका क्या पूछना है। स्वामी जो कहेगा वह करेंगे; समझते सब कुछ हैं पर इस अवसर पर समझना कुछ काम नहीं आता, और जैसे स्वामी रक्खेगा वैसे रहेंगे। जब अपने को वेच ही दिया तब इसका क्या विचार है।

---

* इस काल में जब कोई दास्य स्वीकार करता था तो सिर पर तृण रखता था।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

(ऊपर देख कर) क्या कहा "कुछ दाम कम करो।" आर्य हम लोग तो क्षत्रिय हैं, हम दो बात कहाँ से जानें, जो कुछ ठीक था, कह दिया।

(नेपथ्य में से)

आर्य्यपुत्र ! ऐसे समय में हम को छोड़े जाते हो ! तुम दास होगे तो मैं स्वाधीन रह कर क्या करूँगी ? स्त्री को अर्द्धाङ्गिनी कहते हैं; इससे पहिले बायाँ अंग बेच लो तब दहिना अंग बेचो।

ह०—(सुन कर बड़े शोक से) हा ! रानी की यह दशा इन आँखों से कैसे देखी जायगी ?

(सड़क पर शैव्या और बालक फिरते हुए दिखाई पड़ते हैं)

शै०—कोई महात्मा कृपा कर के हमको मोल ले तो बड़ा उपकार हो।

बा०—अमको बी कोई मोल ले तो बला उपकाल हो।

शै०—(आँखों में आँसू भर कर) पुत्र ! चन्द्रकुलभूषण महाराज वीरसेन का नाती और सूर्य्यकुल की शोभा महाराज हरिश्चन्द्र का पुत्र हो कर तू क्यों ऐसे कातर बचन कहता है ! मैं अभी जीती हूँ ! (रोती है)

बा०—(माँ का आँचल पकड़ के) माँ, तुमको कोई मोल लेगा तो अमको भी मोल लेगा। आँ आँ माँ लोती काएको औ (कुछ रोना सा मुँह बना के शैव्या का आँचल पकड़ के झूलने लगता है।)

शै०—(आँसू पोंछ कर) मेरे भाग्य से पूछ।

ह०—अहह ! भाग्य ! यह भी तुम्हें देखना था ! हा ! अयोध्या

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

की प्रजा रोती रह गई। हम उनको कुछ धीरज भी न दे आए। उनकी अब कौन गति होगी? हा! यह नहीं कि राज छूटने पर भी छुटकारा हो। अब यह देखना पड़ा। हृदय! तुम इस चक्रवती की सेवा योग्य बालक और स्त्री को बिकता देख कर टुकड़े टुकड़े क्यों नहीं हो जाते?

(बारंबार लम्बी साँसें लेकर आँसू बहाता है।)

शै०—(कोई महात्मा इत्यादि कहती हुई ऊपर देख कर) क्या कहा? "क्या क्या करोगी?" परपुरुष से सम्भाषण और उच्छिष्ट भोजन छोड़ कर और सब सेवा करूँगी। (ऊपर देख कर) क्या कहा? "इतने मोल पर कौन लेगा?" आर्य्य! कोई साधु ब्राह्मण महात्मा कृपा कर के ले ही लेंगे। (उपाध्याय और बटुक आते हैं)

उ०—क्यों रे कौडिन्य! सच ही दासी बिकती है?

ब०—हाँ गुरू जी, क्या मैं झूठ कहूँगा। आप ही देख लीजियेगा।

उ०—तो चल, आगे आगे भाड़ हटाता चल। देख धाराप्रवाह की भाँति कैसे सब कामकाजी लोग इधर से उधर फिर रहे हैं, भीड़ के मारे पैर धरने की जगह नहीं है और मारे कोलाहल के कान नहीं दिया जाता।

ब०—(आगे आगे चलता हुआ) हटो भाई हटो। (कुछ आगे बढ़ कर) गुरू जी यह जहाँ भीड़ लगी है वहीं होगी।

उ०—(शैव्या को देख कर) अरे यही दासी बिकती है?

शै०—(अरे कोई हमको मोल ले इत्यादि कहती और रोती है।)

बा०—(माता की भाँति तोतली बोली से कहता है)

CC-0. Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

उ०—पुत्री ! कहो तुम कौन कौन सेवा करोगी ?

शै०—परपुरुष से सम्भाषण और उच्छिष्ट भोजन छोड़ कर और जो जो कहियेगा सब सेवा करूगी।

उ०—वाह ! ठीक है। अच्छा लो यह सुवर्ण। हमारी ब्राह्मणी अग्निहोत्र के अग्नि की सेवा से घर के कामकाज नहीं कर सकती, सो तुम सम्हालना।

शै०—(हाथ फैला कर) महाराज आपने बड़ा उपकार किया।

उ०—(शैव्या को भली भाँति देख कर आप ही आप) अहा ! यह निस्सन्देह किसी बड़े कुल की है। इसका मुख सहज लज्जा से ऊँचा नहीं होता और दृष्टि बराबर पैर ही पर है। जो बोलती है वह धीरे धीरे और बहुत सम्हाल के बोलती है। हा ! इसकी यह गति क्या हुई ! (प्रगट) पुत्री तुम्हारे पति हैं न ?

शै०—(राजा की ओर देखती है।)

ह०—(आप ही आप दुःख से) अब नहीं है। पति के होते भी ऐसे स्त्री की यह दशा हो !

उ०—(राजा को देख कर आश्चर्य से) अरे यह विशाल नेत्र, प्रशस्त वक्षस्थल और संसार की रक्षा करने के योग्य लंबी लंबी भुजावाला कौन मनुष्य है, और मुकुट के योग्य सिर पर तृण क्यों रक्खा है ? (प्रगट) महात्मा ! तुम हमको अपने दुःख का भागी समझो और कृपापूर्वक अपना सब वृत्तान्त कहो।

ह०—भगवन् ! और तो विदित करने का अवसर नहीं है,

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

इतना ही कह सकता हूँ कि ब्राह्मण के ऋण के कारण यह दशा हुई।

उ०—तो हम से धन लेकर आप शीघ्र ही ऋणमुक्त हूजिए !

ह०—(दोनों कानों पर हाथ रख कर) राम राम ! यह तो ब्राह्मण की वृत्ति है। आप से धन लेकर हमारी कौन गति होगी ?

उ० – तो पाँच हजार पर आप दोनों में से जो चाहे सो हमारे संग चले।

शै०—(राजा से हाथ जोड़ कर) नाथ, हमारे आछत आप मत बिकिये, जिसमें हमको अपनी आँख से यह न देखना पड़े, हमारी इतनी बिनती मानिये। (रोती है।)

ह० (आँसू रोक कर) अच्छा। तुम्हीं जाओ। (आप ही आप) हा ! यह वज्रहृदय हरिश्चन्द्र ही का है कि अब भी नहीं विदीर्ण होता !

शै०—(राजा के कपड़े में सोना बाँधती हुई) नाथ ! अब तो दर्शन भी दुर्लभ होंगे। (रोती हुई उपाध्याय से) आर्य्य ! आप क्षण भर क्षमा करें तो मैं आर्य्यपुत्र का भली भाँति दर्शन कर लूँ। फिर यह मुख कहाँ और मैं कहाँ !

उ०—हाँ हाँ मैं जाता हूँ, कौडिन्य यहाँ है तुम उसके साथ आना। (जाता है)

शै०—(रोकर) नाथ मेरे अपराधों को क्षमा करना।

ह०—(अत्यन्त घबड़ा कर) अरे, अरे विधाता तुझे यही करना था। (आपही आप) हा ! पहिले महारानी बना कर अब दैव ने इसे दासी बनाया। यह भी देखना बदा था।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

हमारी इस दुर्गति से आज कुलगुरु भगवान सूर्य का भी मुख मलिन हो रहा है। (रोता हुआ, प्रगट रानी से) प्रिये ! सर्व भाव से उपाध्याय को प्रसन्न रखना और सेवा करना।

शै०—(रो कर) नाथ जो आज्ञा।

बटु०—उपाध्याय जी गये, अब चलो जल्दी करो।

ह०—(आँखों में आँसू भर के) देवी (फिर रुक कर अत्यन्त सोच से आप ही आप) हाय ! अब मैं देवी क्यों कहता हूँ, अब तो विधाता ने इसे दासी बनाया। (धैर्य्य से) देवी ! उपाध्याय की आराधना भली भाँति करना और इनके सब शिष्यों से भी सुहृद्‌भाव रखना, ब्राह्मण की स्त्री की प्रीतिपूर्वक सेवा करना, बालक का यथासम्भव पालन करना और अपने धर्म और प्राण की रक्षा करना। विशेष हम क्या समझावैं जो जो दैव दिखावे उसे धीरज से देखना। (आँसू बहते हैं)

शै०—जो आज्ञा। (राजा के पैरों पर गिर के रोती है)

ह०—(धैर्यपूर्वक) प्रिये ! देर मत करो, बटुक घबड़ा रहे हैं।

शै०—(उठ कर रोती और राजा की ओर देखती हुई धीरे धीरे चलती है।)

बा०—(राजा से) पिता जी, मां कआं जाती एं ?

ह०—(धैर्य से आँसू रोक कर) जहाँ हमारे भाग्य ने उसे दासी बनाया है।

बा०—(बटुक से) अले मा को मत ले जा। (मा का आँचल पकड़ के खींचता है)

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

बटु०—(बालक को ढकेल कर, चल चल देर होती है ।

बा०—(ढकेलने से गिर कर रोता हुआ उठ कर अत्यन्त क्रोध और करुणा से माता पिता की ओर देखता है)

ह०—ब्राह्मण देवता ! बालकों के अपराध से नहीं रुष्ट होना। (बालक को उठा कर धूल पोंछ के मुँह चूमता हुआ) पुत्र ! मुझ चाण्डाल का मुख इस समय ऐसे क्रोध से क्यों देखता है ? ब्राह्मण का क्रोध तो सभी दशा में सहना चाहिये । जाओ माता के संग, मुझ भाग्यहीन के साथ रह कर क्या करोगे ? (रानी से) प्रिये ! धैर्य धरो। अपना कुल और जाति स्मरण करो। जाओ, देर होती है।

(रानी और बालक रोते हुए बटुक के साथ जाते हैं)

ह०—धन्य हरिश्चन्द्र । तुम्हारे सिवाय और ऐसा कठोर हृदय किसका होगा ? संसार में धन और जन छोड़ कर लोग स्त्री की रक्षा करते हैं पर तुमने उसका भी त्याग किया

(विश्वामित्र आते हैं)

ह०—(पैर पर गिर के प्रणाम करता है)

वि०—ला दे दक्षिणा । अब सांझ होने में कुछ देर नहीं है ।

ह०—(हाथ जोड़ कर) महाराज आधी लीजिये आधी अभी देता हूँ । (सोना देता है)

वि०—हम आधी दक्षिणा ले के क्या करें, दे चाहे जहाँ से सब दक्षिणा ।

(नेपथ्य में)

धिक् तपो धिक् व्रतमिदं धिक् ज्ञानं धिग् बहुश्रुतम् ।
नीतवानसियद्ब्रह्मन् हरिश्चन्द्रमिमां दशा ॥

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

वि०—(बड़े क्रोध से) आः हम को धिक्कार देने वाला यह कौन दुष्ट है ? (ऊपर देख कर) अरे विश्वेदेवा (क्रोध से जल हाथ में ले कर) अरे क्षत्रिय के पक्षपातियो ! तुम अभी विमान से गिरो और क्षत्रिय के कुल में तुम्हारा जन्म हो और वहाँ भी लड़कपन ही में ब्राह्मण के हाथ मारे जाओ *। (जल छोड़ते हैं)

(नेपथ्य में हाहाकार के साथ बड़ा शब्द होता है)

(सुन कर और ऊपर देख कर आनन्द से) हहहह ! अच्छा हुआ। यह देखो किरीट कुण्डल बिना मेरे क्रोध से विमान से छूट कर विश्वेदेवा उलटे ही हो कर नीचे गिरते हैं। और हमको धिक्कार दें।

ह०—(ऊपर देख कर भय से) वाह रे तप का प्रभाव। (आप ही आप) तब तो हरिश्चन्द्र को अब तक शाप नहीं दिया है यही बड़ा अनुग्रह है। (प्रगट) भगवन् यह स्त्री बेच कर आधा धन पाया है सो लें, और आधा हम अपने को बेच कर अभी देते हैं। (नेपथ्य में) अरे अब तो नहीं सही जाती।

वि०—हम आधा न लेंगे चाहे जहां से अभी सब दे।

ह०—(अरे सुनो भाई सेठ साहूकार इत्यादि पुकारता हुआ घूमता है)

---

* यहां पांचों विश्वेदेवा विश्वामित्र के शाप से द्वापर में द्रौपदी के पांच पुत्र हुए थे जिन्हें अश्वत्थामा ने बालकपन ही में मार डाला।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

(चांडाल के वेष में धर्म और सत्य आते हैं ❀)

धर्म—(आप ही आप)

हम प्रतच्छ हरिरूप जगत हमरे बल चालत ।
जल थल नभ थिर मो प्रभाव मरजाद न टालत ॥
हम ही नर के मीत सदा सांचे हितकारी ।
इक हमहीं संग जात तजत जब पितु सुत नारी ॥
सो हम नित थित सत्य में जाके बल सब जग जियो ।
सोइ सत्य परिच्छन नृपति को आजु भेष हम यह लियो ॥

(आश्चर्य से आप ही आप) सचमुच इस राजर्षि के समान दूसरा आज त्रिभुवन में नहीं है । (आगे बढ़ कर प्रत्यक्ष) अरे ! हरजनवाँ ! मोहर का सन्दूक ले आवा है न ?

सत्य—क चौधरी मोहर के का करबो ?

धर्म—तोंह से का काम पूछै से ?

(दोनों आगे बढ़ते हुए फिरते हैं)

ह०—(अरे सुनो भाई सेठ साहूकार इत्यादि दो तीन बेर पुकार के इधर उधर घूम कर) हाय ! कोई नहीं बोलता और कुलगुरु भगवान् सूर्य भी आज हमसे रुष्ट होकर शीघ्र ही अस्ताचल जाया चाहते हैं (घबराहट दिखाता है)।

धर्म—(आपही आप) हाय हाय ! इस समय इस महात्मा को बड़ा ही कष्ट है । तो अब चलें आगे । (आगे बढ़

❀ कांछ, काला रंग, लाल नेत्र, सिर भर छोटे छोटे घुंघुराले बाल और शरीर नंगा, बातों से मतवालापन झलकता हुआ ।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

कर) अरे अरे हम तुम को मोल लेंगे लेव यह पचास सै मोहर लेव।

ह०—(आनन्द से आगे बढ़ कर) वाह कृपानिधान बड़े अवसर पर आये। लाइये। (उसको पहिचान कर) आप मोल लेंगे ?

धर्म—हां हम मोल लेंगे। (सोना देना चाहता है)

ह०—आप कौन हैं ?

धर्म—

हम चौधरी डोम सरदार। अमल हमारा दोनों पार ॥
सब मसान पर हमरा राज। कफन माँगने का है काज ॥
फूलमती देवी ❋ के दास। पूजैं सती मसान निवास ॥
धनतेरस औ रात दिवाली। बल चढ़ाय के पूजैं काली ॥
सो हम तुम को लेंगे मोल। देंगे मुहर गांठ से खोल ॥

(मत्त की भाँति चेष्टा करता है।)

ह०—(बड़े दुःख से) अहह ! बड़ा दारुण व्यसन उपस्थित हुआ है। (विश्वामित्र से) भगवन् ! मैं पैर पड़ता हूँ, मैं जन्म भर आप का दास होकर रहूँगा, मुझे चाण्डाल होने से बचाइये।

वि०—छिः मूर्ख ! भला हम दास ले के क्या करेंगे। "स्वयं दासास्तपस्विनः"।

ह०—(हाथ जोड़ कर) जो आज्ञा कीजियेगा हम सब करेंगे।

❋ प्राचीन काल में चाण्डालों की कुलदेवी चंडकात्यायनी थीं परंतु इस काल में फूलमती इन लोगों की कुलदेवी हैं।

CC-0.Courtesy, Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

वि०—सब करेगा न ? (ऊपर हाथ उठा कर) धर्म के साक्षी देवता लोग सुनें, यह कहता है कि जो आप कहेंगे मैं सब करूँगा।

ह०—हां हां जो आप आज्ञा कीजियेगा सब करूँगा।

वि०—तो इसी गाँहक के हाथ अपने को बेंचकर अभी हमारी शेष दक्षिणा चुका दे।

ह०—जो आज्ञा। (आप ही आप) अब कौन सोच है। (प्रगट धर्म से) तो हम एक नियम पर विकेंगे !

धर्म—वह कौन ?

ह०—भीख असन कम्मल बसन, राखिहौं दूर निवास।
जो प्रभु आज्ञा होइहै, करिहौं सब है दास॥

धर्म—ठीक है, लेव सोना (दूर से राजा के आंचल में मोहर देता है।)

ह०—(ले कर हर्ष से आप ही आप)
ऋण छूट्यो पूर्‍यो वचन, द्विजहु न दीनो शाप।
सत्य पालि चंडालहू, होइ आजु मोहि दाप॥
(प्रगट विश्वामित्र से) भगवन् ! लीजिये यह मोहर।

वि०—(मुँह चिढ़ा कर) सचमुच देता है ?

ह०—हां हां यह लीजिये। (मोहर देते हैं)

वि०—(लेकर) स्वस्ति। (आप ही आप) बस अब चलो बहुत परीक्षा हो चुकी। (जाना चाहते हैं)

ह०—(हाथ जोड़ कर) भगवन् ! दक्षिणा देने में देर होने का अपराध क्षमा हुआ न ?

वि०—हां क्षमा हुआ। अब हम जाते हैं।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

ह०--भगवन् ! प्रणाम करता हूँ।

(विश्वामित्र आशीर्वाद देकर जाते हैं)

ह०--अब चौधरी जी (लज्जा से रुक कर) स्वामी की जो आज्ञा हो वह करें।

धर्म—मत्त की भांति नाचता हुआ।

जाओ अभी दक्खिनी मसान।
लेव वहां कफ्फन का दान॥
जो कर तुम को नहीं चुकावे।
सो किरिया करने नहिं पावे॥
चलो घाट पर करो निवास।
भए आज से हमरे दास॥

ह०--जो आज्ञा।

(जवनिका गिरती है)

इति तीसरा अंक।

चौथा अंक।

(स्थान—दक्षिण स्मशान, नदी, पीपल का बड़ा पेड़ चिता, मुरदे, कौए, सियार, कुत्ते, हड्डी इत्यादि। कम्मल ओढ़े और एक मोटा लट्ठ लिए हुए राजा हरिश्चन्द्र दिखाई पड़ते हैं।)

ह०--(लंबी सांस लेकर) हाय ! अब जन्म भर यही दुख भोगना पड़ेगा।

जाति दास चंडाल की, घर घनघोर मसान।
कफन खसोटी को करम, सब ही एक समान॥

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

न जाने विधाता का क्रोध इतने पर भी शान्त हुआ कि नहीं। बड़ों ने सच कहा है कि दुःख से दुःख जाता है। दक्षिणा का ऋण चुका तो यह कर्म करना पड़ा। हम क्या क्या सोचें ? अपनी अनाथ प्रजा को, या दीन नातेदारों को, या अशरण नौकरों को, या रोती हुई दासियों को, या सूनी अयोध्या को, या दासी बनी महारानी को, या उस अनजान बालक को, या अपने ही इस चंडालपने को। हा ! बटुक के धक्के से गिर कर रोहिताश्व ने क्रोध भरी और रानी ने जाते समय करुणाभरी दृष्टि से जो मेरी ओर देखा था वह अब तक नहीं भूलता। (घबड़ा कर) हा देवी ! सूर्यकुल की बहू और चन्द्रकुल की बेटी होकर तुम बेची गई और दासी बनीं। हा ! तुम अपने जिन सुकुमार हाथों से फूल की माला भी नहीं गूथ सकती थीं उनसे बरतन कैसे मांजोगी ! (मोह प्राप्त होना चाहता है पर सम्हल कर) अथवा क्या हुआ ? यह तो कोई न कहेगा कि हरिश्चन्द्र ने सत्य छोड़ा।

बेचि देह दारा सुअन, होइ दासहू मन्द।
राख्यो निज बच सत्य करि, अभिमानी हरिचन्द ॥

(आकाश से पुष्पवृष्टि होती है)

अरे ! यह असमय में पुष्पवृष्टि कैसी ? कोई पुण्यात्मा का मुरदा आया होगा। तो हम सावधान हो जाँय (लट्ठ कंधे पर रख कर फिरता हुआ) खबरदार खबरदार बिना हमसे कहे और बिना हमें आधा कफ़न दिये कोई संस्कार न करे (यही कहता हुआ निर्भय मुद्रा से इधर उधर देखता फिरता है) (नेपथ्य में कोलाहल सुन कर) हाय हाय ! कैसा

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

भयंकर स्मशान है ! दूर से मंडल बाँध बाँध कर चोंच बाए, डैना फैलाए, कंगालों की तरह मुर्दों पर गिद्ध कैसे गिरते हैं और कैसा मांस नोच कर आपुस में लड़ते और चिल्लाते हैं। इधर अत्यन्त कर्णकटु अमंगल के नगाड़े की भांति एक के शब्द की लाग से दूसरे सियार कैसे रोते हैं। इधर चिराइन फैलाती हुई चट चट करती चिता कैसी जल रही हैं, जिन में कहीं से मांस के टुकड़े उड़ते हैं, कहीं लोहू या चरबी बहती है, आग का रंग मांस के सम्बन्ध से नीला पीला हो रहा है, ज्वाला घूम घूम कर निकलती है। कभी एक साथ धधक उठती है, कभी मन्द हो जाती है। धूआं चारों ओर छा रहा है। (आगे देख कर आदर से) अहा ! यह बीभत्स व्यापार भी बड़ाई के योग्य है। शव ! तुम धन्य हो कि इन पशुओं के इतने काम आते हो। अतएव कहा है—

"मरनो भलो बिदेस को, जहाँ न अपुनो कोय।
माटी खाय जनावरां; महा महोच्छव होय ॥"

अहा ! देखो—

सिर पै बैठ्यो काग आंख दोउ खात निकारत।
खींचत जीभहिं स्यार अतिहि आनँद उर धारत ॥
गिद्ध जाँघ कहँ खोदि खोदिं के मांस उचारत।
स्वान आँगुरिन काटि काटि कै खान विचारत ॥
बहु चील नोचि ले जात तुच मोद मढ्यो सब को हियो।
मनु ब्रह्मभोज जिजमान कोउ आजु भिखारिन कहं दियो ॥

अहा ! शरीर भी कैसी निस्सार वस्तु है।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

सोई मुख सोई उदर, सोई कर पद दोय।
भयो आजु कछु और ही, परसत जेहि नहिं कोय ॥
हाड़ मांस लाला रकत, बपा तुचा सब कोय।
छिन्न भिन्न दुरगन्ध मय, मरे मनुस के होय ॥
कादर जेहि लखिकै डरत, पंडित पावत लाज।
अहो! व्यर्थ संसार को, विषय बासना साज ॥

अहा! मरना भी क्या वस्तु है।

सोई मुख जेहि चन्द बखान्यो।
सोई अंग जेहि प्रिय करि जान्यो ॥
सोई भुज जे पिय गर डारें।
सोइ भुज जिन रन विक्रम पारें ॥
सोई पद जेहि सेवक बन्दत।
सोई छबि जेहिं देखि अनन्दत ॥
सोइ रसना जहँ अमृत बानी।
जेहि सुनि कै हिय नारि जुड़ानी ॥
सोइ हृदै जहँ भाव अनेका।
सोई सिर जहँ निज बच टेका ॥
सोई छबि मय अंग सुहाए।
आजु जीव बिनु धरनि सुवाए ॥
कहां गई वह सुंदर सोभा।
जीवत जेहि लखि सब मन लोभा ॥
प्रानहुँ ते बढ़ि जा कहँ चाहत।
ता कहँ आजु सबै मिलि दाहत ॥
फूल बोझ हू जिन न सहारे।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

तिन पै बोझ काठ बहु डारे ॥
सिर पीड़ा जिनकी नहिं हेरी।
करत कपाल क्रिया तिन केरी ॥
छिनहूँ जे न भये कहुँ न्यारे।
तेहूँ बन्धुन छोड़ि सिधारे ॥
जो दृग कोर महीप निहारत।
आजु काक तेहि भोज बिचारत ॥
भुजबल जे नहिं भुवन समाए।
ते लखियत मुख कफन छिपाए ॥
नरपति प्रजा भेद बिनु देखे।
गने काल सब एकहि लेखे ॥
सुभग कुरूप अमृत विख साने।
आजु सबै इक भाव बिकाने ॥
पुरू दधीच कोऊ अब नाहीं।
रहे नाम हीं ग्रन्थन मांही ॥

अहा ! देखो वही सिर जिस पर मंत्र से अभिषेक होता था, कभी नवरत्न का मुकुट रक्खा जाता था, जिसमें इतना अभिमान था कि इन्द्र को भी तुच्छ गिनता था, और जिसमें बड़े बड़े राज जीतने के मनोरथ भरे थे, आज पिशाचों का गेंद बना है और लोग उसे पैर से छूने में भी घिन करते हैं। (आगे देख कर) अरे यह स्मशान देवी है। अहा कात्यायनी को भी कैसा बीभत्स उपचार प्यारा है ! यह देखो डोम लोगों ने सूखे गले सड़े फूलों की माला गंगा में से पकड़

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

कर देवी को पहिना दी है और कफन की ध्वजा लगा दी है। मरे बैल और भैंसों के गले के घण्टे पीपल की डार में लटक रहे हैं जिनमें लोलक की जगह नली की हड्डी लगी है। घंट के पानी से चारों ओर से देवी का अभिषेक होता है और पेड़ के खंभे म लोहू के थापे लगे हैं। नीचे जो उतारों की बलि दी गई है उसके खाने को कुत्ते और सियार लड़ लड़ कर कोलाहल मचा रहे हैं (हाथ जोड़ कर)

"भगवति ! चंडि ! प्रेते ! प्रेतविमाने ! लसत्प्रेते ! प्रेतास्थि-
रौद्ररूपे ! प्रेताशिनि ! भैरवि ! नमस्ते" *

(नेपथ्य में) राजन् ! हम केवल चण्डालों के प्रणाम के योग्य हैं। तुम्हारे प्रणाम से हमें लज्जा आती है। माँगो, क्या बर माँगते हो।

ह० —(सुन कर आश्चर्य से) भगवति ! यदि आप प्रसन्न हैं तो हमारे स्वामी का कल्याण कीजिये। (नेपथ्य में) साधु ! महाराज हरिश्चन्द्र साधु !

ह० —(ऊपर देख कर) अहा ! स्थिरता किसी को भी नहीं है। जो सूर्य उदय होते ही पद्मिनीवल्लभ और लौकिक वैदिक दोनों कर्म का प्रवर्त्तक था, जो दोपहर तक अपना प्रचण्ड प्रताप क्षण क्षण बढ़ाता गया, जो गगनाङ्गन का दीपक और काल सर्प का शिखामणि था, वह इस

---

* इसमें प्रायः सब श्लोक आर्यक्षेमीश्वर के बनाए चंडकौशिक से उद्धृत किए गए हैं।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

समय परकटे गिद्ध की भाँति अपना सब तेज गंवा कर देखो समुद्र में गिरा चाहता है। अथवा—

सांझ सोई पट लाल कसे कटि सूरज खप्पर हाथ लह्यो है।
पच्छिन के वहु शब्दन के मिस जीव उचाटन मन्त्र कह्यो है॥
मद्य भरी नर खोपरी सो ससि को नव बिम्बहु धाइ गह्यो है।
दै वलि जीव पसू यह मत्त ह्वै काल कपालिक नाचि रह्यो है॥
सूरज धूम विना की चिता सोइ अन्त में लै जल माहिं वहाई।
बोले घने तरु वैठि विहंगम रोअत सो मनु लोग लोगाई॥
धूम अधार कपाल निसाकर, हाड़ नछत्र लहू सी * ललाई।
आनन्द हेतु निसाचर के यह काल मसान सो सांझ वनाई॥

अहा! यह चारों ओर से पक्षी लोग कैसा शब्द करते हुए अपने अपने घोसलों की ओर चले आते हैं। वर्षा से नदी का भयङ्कर प्रवाह, सांझ होने से स्मशान के पीपल पर कौओं का एक संग अमंगल शब्द से कांव कांव करना और रात के आगमन से एक सन्नाटे का समय चित्त में कैसी उदासी और भय उत्पन्न करता है। अन्धकार वढ़ता ही जाता है। वर्षा के कारण इन स्मशानवासी मण्डूकों का टर टर करना भी कैसा डरावना मालूम होता है।

रुरुआ चहुं दिसि ररत डरत सुनि के नर नारी॥
फटफटाइ दोउ पंख उलूकहु रटत पुकारी।
अन्धकार बस गिरत काक अरु चील करत रव॥

---

* प्राचीन काल में राज के अपराधी लोग स्मशान पर गला काट कर मारे जाते थे इसी से यहां स्मशान के बर्णन में लोहू का वर्णन है।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

गिद्ध गरुड़ हड़गिझ भजत लखि निकट भयद रव।
रोअत सियार गरजत नदी स्वान भूंकि डर पावहीं॥
संग दादुर झींगुर रुदन धुनि मिलि स्वर तुमुल मचावहीं॥

इस समय ये चिता भी कैसी भयंकर मालूम पड़ती है। किसी का सिर चिता के नीचे लटक रहा है, कहीं आंच से हाथ पैर जल कर गिर पड़े हैं, कहीं शरीर आधा जला है, कहीं बिलकुल कच्चा है, किसी को वैसे ही पानी में बहा दिया है, किसी को किनारे ही छोड़ दिया है, किसी का मुंह जल जाने से दांत निकला हुआ भयंकर हो रहा है, और कोई आग में ऐसा जल गया है कि कहीं पता भी नहीं है। वाह रे शरीर! तेरी क्या क्या गति होती है!!! सचमुच मरने पर इस शरीर को चटपट जला ही देना योग्य है क्योंकि ऐसे रूप और गुण जिस शरीर में थे उसको कीड़ों या मछलियों से नुचवाना और सड़ाकर दुर्गन्धमय करना बहुत ही बुरा है। न कुछ शेष रहेगा न दुर्गति होगी। हा! चलो आगे चलें। (खबरदार इत्यादि कहता हुआ इधर उधर घूमता है)

(पिशाच और डाकिनीगण परस्पर आमोद करते
और गाते बजाते हुए आते हैं)

पिशाच और डाकिनी—

हैं भूत प्रेत हम, डाइन हैं छामछम।
सेवैं मसान शिव को भजैं बोलैं बम बम बम॥

CC-0.Courtesy. Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

पिशाच—

हम कड़ कड़ कड़ कड़ कड़ कड़ हड्डी को तोड़ैंगे।
हम भड़ भड़ धड़ धड़ पड़ पड़ सिर सब का फोड़ैंगे।

डाकिनी—

हम घुट घुट घुट घुट घुट घुट लोहू पिलावैंगी।
हम चट चट चट चट चट चट ताली बजावैंगी॥

सब—

हम नाचैं मिल कर थेई थेई थेई थेई कूदैं धम् धम् धम्।
हैं भूत प्रेत हम, डाइन हैं छमाछम।

पिशाच—

हम काट काट कर सिर को गेंदा उछालैंगे।
हम खींच खींच कर चरबी पंशाखा बालैंगे॥

डाकिनी—

हम मांग में लाल लोहू का सेंदुर लगावैंगी।
हम नस के तागे चमड़े का लहँगा बनावैंगी॥

सब—

हम धज से सज के बज के चलैंगे चमकैंगे
चम चम चम।

पिशाच—

लोहू का मुँह से फर्र फर्र फुहारा छोड़ैंगे।
माला गले पहिरने को अँतड़ी को जोड़ैंगे॥

डाकिनी—

हम लादं के औंधे मुरदे चौकी वनावैंगी।
कफन बिछा के लड़कों को उस पर सुलावैंगी॥

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

सब—

हम सुख से गावैं ढोल बजावैं ढम ढम
ढम ढम ढम।

(वैसे ही कूदते हुए एक ओर से चले जाते हैं)

ह०—(कौतुक से देख कर) पिशाचों का क्रीड़ा-कुतूहल भी देखने के योग्य है। आह ! यह कैसे काले काले झाड़ू से सिर के बाल खड़े किये लम्बे लम्बे हाथ पैर विकराल दांत लम्बी जीभ निकाले इधर उधर दौड़ते और परस्पर किलकारी मारते हैं मानो भयानक रस की सेना मूर्तिमान होकर यहाँ स्वच्छन्द बिहार कर रही है। हाय हाय ! इनका खेल और सहज व्यवहार भी कैसा भयंकर है। कोई कटाकट हड्डी चबा रहा है कोई खोपड़ियों में लहू भर भर के पीता है, कोई सिर का गेंद बना कर खेलता है, कोई अँतड़ी निकाल कर गले में डाले है और कोई चन्दन की भाँति चरबी और लहू शरीर में पोत रहा है, एक दूसरे से माँस छीन कर ले भागता है, एक जलता माँस मारे तृष्णा के मुँह में रख लेता है पर जब गरम मालूम पड़ता है तो थू थू कर के थूक देता है, और दूसरा उसी को फिर झट से खा जाता है। हा ! देखो यह चुड़ैल एक स्त्री की नाक नथ समेत नोच लाई है जिसे देखने को चारों ओर से सब भूतने एकत्र हो रहे हैं और सभों को इस का बड़ा कौतुक हो गया है ! हँसी में परस्पर लोहू का कुल्ला करते हैं और जलती लकड़ी और मुरदों के अंगों से लड़ते हैं और उनको ले लेकर नाचते हैं। यदि तनिक

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

.. आते हैं तो स्मशान के कुत्तों को पकड़ पकड़ हम, खा जाते हैं। अहा ! भगवान भूतनाथ ने बड़े कठिन स्थान पर योगसाधना की है। (खबरदार इत्यादि कहता हुआ इधर उधर फिरता है) (ऊपर देख कर) आधी रात हो गई, वर्षा के कारण अँधेरी बहुत ही छा रही है, हाथ से हाथ नहीं सूझता ! चांडालकुल की भाँति स्मशान पर तम का भी आज राज हो रहा है। (स्मरण करके) हा ! इस दुःख की दशा में भी हमसे प्रिया अलग पड़ी है। कैसी भी हीन अवस्था हो पर अपना प्यारा जी पास रहे तो कुछ कष्ट नहीं मालूम पड़ता। सच है—"टूट टाट घर टपकत खटियौ टूट पिय कै बाँह उसिसवाँ सुख से लूट।"

विधना ने इस दुःख पर भी वियोग दिया। हा यह वर्षा और यह दुःख ! हरिश्चन्द्र का तो ऐसा कठिन कलेजा है कि सब सहेगा पर जिसने सपने में भी दुःख नहीं देखा वह महारानी किस दशा में होंगी। हा देवि ! धीरज धरो। धीरज धरो ! तुमने ऐसे ही भाग्यहीन से स्नेह किया है जिसके साथ सदा दुःख ही दुःख है। (ऊपर देख कर) पानी बरसने लगा। अरे (घोघी भली भाँति ओढ़ कर) हमको तो यह वर्षा और स्मशान दोनों एक ही से दिखाई पड़ते हैं। देखो—

चपला की चमक चहूँघा सों लगाई चिता चिनगी चिलक पटबीजना चलायो है। हेती बगमाल श्याम बादर सुभूमि कारी वीरबधू लहू बूँद भुव लपटायो है॥ हरीचन्द नीर धार

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

आंसू सी परत जहां दादुर को सोर रोर दुखित
दाहन वियोग दुखियान को मरे हू यह देखो पापी
मसान बनि आयो है ॥

(कुछ देर तक चुप रह कर) कौन है ? (खबरदार
इत्यादि कहता हुआ इधर उधर फिर कर)
इन्द्र काल हू सरिस जो आयसु लाँघै कोय।
यह प्रचंड भुजदंड मम, प्रतिभट ताको होय ॥
अरे कोई नहीं बोलता। (कुछ आगे बढ़ कर) कौन है?
(नेपथ्य में) हम हैं।

ह०—अरे हमारी बात का उत्तर कौन देता है ? चलें जहाँ से आवाज आई है, वहाँ चलकर देखें। (आगे बढ़ कर नेपथ्य की ओर देख कर) अरे यह कौन है ?

चिता भस्म सब अंग लगाए। अस्थि अभूषन विविध बनाए ॥
हाथ मसान कपाल जगावत। को यह चल्यो रुद्र सम आवत ॥

(कापालिक के वेष में धर्म आता है *)

धर्म०—अरे हम हैं—

वृत्ति अयाचित आत्मरति, करि जग के सुख त्याग।
फिरहिं मसान मसान हम, धारि अनन्द विराग ॥

(आगे बढ़कर महाराज हरिश्चन्द्र को देखकर आप ही आप)

---

* गेरुआ वस्त्र का काछा काछे, गेरुआ कफनी पहिने, सिर के बाल खोले, सेंदुर का अर्धचन्द्र दिये, नंगी तलवार गले में लटकती हुई, एक हाथ में खप्पड़ बलता हुआ, दूसरे हाथ में चिमटा, अंग भभूत पोते, नशे में आंखें लाल, लाल फूल की माला और हड्डी के आभूषण पहिने ॥

CC-0 Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

हम प्रतच्छ हरि रूप जगत हमारे बल चालत।
जल थल नभ थिर हम प्रभाव मरजाद न टालत॥
हम ही नर के मीत सदा सांचे हितकारी।
हमही इक संग जात तजत जब पितु सुत नारी॥
सो हम नित थित इक सत्य में जाके बल सब जग जियो।
सोइ सत्य परिच्छन नृपति को आजु भेष हम यह कियो॥

(कुछ सोच कर) राजर्षि हरिश्चन्द्र की दुःख परम्परा अत्यन्त शोचनीय और इनके चरित्र अत्यन्त आश्चर्य के हैं। अथवा महात्माओं का यह स्वभाव ही होता है।

सहत बिविध दुख मरि मिटत, भोगत लाखन सोग।
पै निज सत्य न छांड़हीं, जे जग साँचे लोग॥
बरु सूरज पच्छिम उगे, बिन्ध्य तरै जल माँहि।
सत्य वीर जन पै कबहुँ, निज बच टारत नाँहि॥

अथवा उनके मन इतने बड़े हैं कि दुःख को दुःख, सुख को सुख गिनते ही नहीं, चलें उनके पास चलें। (आगे बढ़कर और देखकर) अरे यही महात्मा हरिश्चन्द्र हैं? (प्रगट) महाराज कल्याण हो।

ह०—(प्रणाम करके) आइये योगिराज!

ध०—महाराज हम अर्थी हैं।

ह०—(लज्जा और बिकलता नाट्य करता है।)

ध०—महाराज आप लज्जा मत कीजिये हमलोग योगबल से सब कुछ जानते हैं। आप इस दशा पर भी हमारा अर्थ पूर्ण करने को बहुत हैं। चन्द्रमा राहु से ग्रसा रहता है तब भी दान दिलवा कर भिक्षुकों का कल्याण करता है।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

ह०—हमारे योग्य जो कुछ हो आज्ञा कीजिये ।

ध०—अंजन गुटिका पादुका, धातु भेद वैताल ।
वज्र रसायन योगिनी, मोहि सिद्धि यहि काल ॥ *

ह०—तो मुझे जो आज्ञा हो करूँ ।

ध०—आज्ञा यही है कि यह सब मुझे सिद्ध हो गये हैं पर विघ्न इसमें बाधक होते हैं सो विघ्नों का निवारण कर दीजिये ।

ह०—आप जानते हैं कि पराया दास हूँ इससे जिससे मेरा धर्म न जाय वह मैं करने को तैयार हूँ ।

ध०—(आप ही) राजन् जिस दिन तुम्हारा धर्म जायगा उस दिन पृथ्वी किसके बल से ठहरेगी । (प्रत्यक्ष) महाराज इसमें धर्म न जायगा क्योंकि स्वामी की आज्ञा तो आप उलङ्घन करते ही नहीं । सिद्धि का आकर इसी श्मशान के निकट ही है और मैं अब पुरश्चरण करने जाता हूँ, आप विघ्नों का निषेध कर दीजिये । (जाता है)

ह०—(ललकार कर) हटो रे हटो, विघ्नों, चारों ओर से तुम्हारा प्रचार हमने रोक दिया ।

(नेपथ्य में) महाराजाधिराज जो आज्ञा । आप से सत्य

---

* अञ्जनासिद्धि से जमीन में गड़े खजाने दीख पड़ते हैं । गुटिका मुँह में रखकर वा पादुका पहिन कर चाहे जहां अलक्ष्य चला जाय । धातुभेद से औषध मात्र सिद्ध होता है । बैताल बस में होकर यथेच्छ काम देता है । वज्र सिद्ध होने से जहां गिराओ वहां गिरता है । रसायन सिद्धि से चांदी सोना बनता है । जोगिनी सिद्ध होने से भूत भविष्य का वृत्तान्त कह देती है और सब इच्छा पूर्ण करती है । ये ही आठो सिद्धियां हैं ।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

वीर की आज्ञा कौन लांघ सकता है ।

खुल्यो द्वार कल्याण को, सिद्ध जोग तप आज ।
निधि सिधि विद्या सब करहिं अपुने मन को काज ॥

ह०—(हर्ष से) बड़े आनन्द की बात है कि विघ्नों ने हमारा कहना मान लिया (विमान पर बैठी हुई तीनों महाविद्या आती हैं) । ❋

म० वि०—महाराज हरिश्चन्द्र ! बधाई है । हमी लोगों को सिद्ध करने को विश्वामित्र ने बड़ा परिश्रम किया था तब देवताओं ने माया से आप को स्वप्न में हमारा रोना सुना कर हमारा प्राण बचाया ।

ह०—(आप ही आप) अरे यही सृष्टि की उत्पन्न, पालन, और नाश करनेवाली महाविद्या हैं जिन्हें विश्वामित्र भी न सिद्ध कर सके प्रगट हाथ जोड़कर) त्रिलोक विजयिनी महाविद्याओं को नमस्कार है ।

म० वि०—महाराज हमलोग तो आपके बस में हैं । हमारा ग्रहण कीजिये ।

ह०—देवियो ! यदि हमपर प्रसन्न हो तो विश्वामित्र मुनि की वशवर्त्तिनी हो । उन्होंने आपलोगों के वास्ते बड़ा परिश्रम किया है ।

म० वि०—धन्य महाराज ! धन्य ! जो आज्ञा (जाती है)

❋ ब्रह्मा, विष्णु, महेश के वेश में पर स्त्री का शृंगार । खेलने में चित्रपट के द्वारा परदे के ऊपर इनको दिखलावेंगे और इनकी ओर से बोलने वाला नेपथ्य में से बोलेगा ।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

(धर्म एक वैताल के सिर पर पिटारा रखवाए हुए आता है)

ध०—महाराज का कल्याण हो। आपकी कृपा से महानिधान† सिद्ध हुआ। आप को वधाई है अब लीजिये इस रसेन्द्र को।

याही के परभाव सो; अमर देव सम होइ।
जोगी जन विहरहिं सदा, मेरु शिखर भय खोइ॥

ह०—(प्रणाम करके) महाराज दासधर्म के यह विरुद्ध है। इस समय स्वामी से कहे विना मेरा कुछ भी लेना स्वामी को धोखा देना है।

ध०—(आश्चर्य से आप ही आप) वाह रे महानुभावता! (प्रगट) तो इससे स्वर्ण बना कर आप अपना दास्य छुड़ा लें।

ह०—यह ठीक है, पर मैंने तो विनती की न कि जब मैं दूसरे का दास हो चुका हो इस अवस्था में मुझे जो कुछ मिले सब स्वामी का है। क्योंकि मैं तो देह के साथ ही अपना सत्व मात्र बेच चुका; इससे आप मेरे बदले कृपा करके मेरे स्वामी ही को रसेन्द्र दीजिये।

ध०—(आश्चर्य से आप ही आप) धन्य हरिश्चन्द्र! धन्य तुम्हारा धैर्य! धन्य तुम्हारा विवेक और धन्य तुम्हारी महानुभावता! या—

चले मेरु वरु प्रलय जल, पवन झकोरन पाय।
पै वीरंन के मन कबहुँ, चलहिं नहीं ललचाय॥

---

† महानिधान बुभुक्षित धातु भदी पारा जिसे बावन तोला पाव रत्ती कहते हैं।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

तो हमें भी इसमें कौन हठ है । (प्रत्यक्ष) बैताल ! जाओ जो महाराज की आज्ञा है वह करो !

बै०—जो रावल जी की आज्ञा । (जाता है)

ध०—महाराज ! ब्राह्ममुहूर्त्त निकट आया, अब हमको भी आज्ञा हो ।

ह०—जोगिराज ! हमको भूल न जाइयेगा, कभी कभी स्मरण कीजियेगा ।

ध०—महाराज ! बड़े बड़े देवता आपका स्मरण करते हैं और करेंगे, मैं क्या कहूँ। (जाता है)

ह०—क्या रात बीत गई ? आज तो कोई भी मुरदा नया नहीं आया । रात के साथ ही स्मशान भी शान्त हो चला भगवान नित्य ही ऐसा करे ।

(नेपथ्य में घंटा नूपुरादि का शब्द सुन कर)

अरे यह बड़ा कोलाहल कैसा हुआ ?

(विमान पर अष्टमहासिद्धि, नवनिधि और बारहो प्रयोग आदि देवता * आते हैं)

---

* साधारण देवी देवताओं के वेश में । अष्टसिद्धि यथा—अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशत्व और वशित्व । नव निद्धि यथा—पद्म, महापद्म, शंख, मकर, कच्छप, मुकुन्द, नील और वर्चस् । बारह प्रयोग, यथा—मारण, मोहन, उच्चाटन, कीलन, विद्वेषण और कामनाशन, ये ६ बुरे और स्तंभन वशीकरण, आकर्षण, बन्दीमोचन, कामपूरण और वाकप्रसारण ये ६ अच्छे । ये भी चित्र-पट में दिखलाये जांयगे ।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

ह०—(आश्चर्य से) अरे यह कौन देवता बड़े प्रसन्न हो कर स्मशान पर एकत्र होरहे हैं।

दे०—महाराज हरिश्चन्द्र की जय हो। आपके अनुग्रह से हम-लोग विघ्नों से छूटकर स्वतंत्र हो गए। अब हम आपके वश में हैं जो आज्ञा हो करें। हमलोग अष्ट महासिद्धि, नवनिधि और बारह प्रयोग सब आपके हाथ में हैं।

ह०—(प्रणाम करके) यदि हम पर आपलोग प्रसन्न हों तो महासिद्धि योगियों के, निधि सज्जनों के और प्रयोग साधकों के पास जाओ।

दे०—[आश्चर्य से] धन्य राजर्षि हरिश्चन्द्र! तुम्हारे बिना और ऐसा कौन होगा जो घर आई लक्ष्मी का त्याग करे। हमी लोगों की सिद्धि को बड़े बड़े योगी मुनि पच मरते हैं पर तुमने तृण की भांति हमारा त्याग करके जगत का कल्याण किया।

ह०—आप लोग मेरे सिर आँखों पर हैं पर मैं क्या करूँ, क्योंकि मैं पराधीन हूँ। एक बात और भी निवेदन है, वह यह कि छ अच्छे प्रयोग की तो हमारे समय में सद्यः सिद्धि होय पर बुरे प्रयोगों की सिद्धि विलम्ब से हो।

दे०—महाराज! जो आज्ञा। हम लोग जाते हैं। आज आपके सत्य ने शिव जी के कीलन * को भी शिथिल कर दिया महाराज का कल्याण हो। [जाते हैं]

---

* शिव जी ने साधनमात्र को कील दिया है जिसमें जल्दी न सिद्ध हो, सो राजा हरिश्चन्द्र ने विघ्नों को जो रोक दिया इससे वह

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

[नेपथ्य में इस भांति मानों राजा हरिश्चन्द्र नहीं सुनता
(एक स्वर से)
तो अप्सरा को भेजें ? (दूसरे स्वर से) छिः मूर्ख ! जिसको अष्टसिद्धि नवनिधियों ने नहीं डिगाया उसको अप्सरा क्या डिगावेंगी ।
(एक स्वर से) तो अब अन्तिम उपाय किया जाय ?
(दूसरे स्वर से) हां तक्षक को आज्ञा दें ।
अब और कोई उपाय नहीं है ।

ह०—अहा अरुण का उदय हुआ चाहता है । पूर्व दिशा ने अपना मुँह लाल किया । (स्वांस लेकर)
"वा चकई को भयो चित चीतो चितौति चहूँ दिसि चाय सों नांची । ह्वै गई छीन कलाधर की कला जामिनी जोति मनो जम जाँची ॥ बोलत बैरी विहंगम देव सँजोगिन की भई सम्पति कांची । लोहू पियो जो वियोगिन को सो कियो मुख लाल पिशाचिन प्राची"

हा ! प्रिये, इन बरसातों की रात को तुम रो रो के बिताती होगी ! हा ! वत्स रोहिताश्व, भला हमलोगों ने तो अपना शरीर बेचा तब दास हुए, तुम बिना बिके ही क्यों दास बन गये !

जेहि सहसन परिचारिका, राखत हाथहिं हाथ ।
सो तुम लोटत धूर में, दास बालकन साथ ॥

कीलन भी शिव जी की इच्छापूर्वक उस समय दूर हो गया था क्योंकि यह भी तो एक सब में बड़ा विघ्न था ।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

जाकी आयसु जग नृपति, सुनतहि धारत सीस।
तेहि द्विज बटु आज्ञा करत, अहह कठिन अतिईस ॥
बिनु तन बेचे बिनु दिये, बिनु जग ज्ञान विवेक।
दैव सर्प दंशित भए, भोगत कष्ट अनेक ॥

(घवड़ा कर) नारायण ! नारायण ! मेरे मुख से क्या निकल गया। देवता उसकी रक्षा करें। (बाईं आँख का फड़कना दिखाकर) इसी समय में यह महा अपशकुन क्यों हुआ ! (दहिनी भुजा का फड़कना दिखा कर) अरे और साथ ही यह मंगल शकुन भी ! न जाने क्या होनहार है, वा अब क्या होनहार है जो होना था सो हो चुका। अब इससे बढ़कर और कौन दशा होगी ! अब केवल मरण मात्र बाकी है। इच्छा तो यही है कि सत्य छूटने और दीन होने के पहिले ही शरीर छूटे क्योंकि इस दुष्ट चित्त का क्या ठिकाना है, पर वश क्या है।

(नेपथ्य में)

पुत्र हरिश्चन्द्र ! सावधान। यही अन्तिम परीक्षा है। तुम्हारे पुरुषा इक्ष्वाकु से ले कर त्रिशंकु पर्यन्त आकाश में नेत्र भरे खड़े एकटक तुम्हारा मुख देख रहे हैं। आज तक इस वंश में ऐसा कठिन दुःख किसी को नहीं हुआ था। ऐसा न हो कि इनका सिर नीचा हो। अपने धैर्य का स्मरण करो।

ह०—(घवड़ा कर ऊपर देखकर) अरे यह कौन है ? कुलगुरु भगवान सूर्य अपना तेज समेटे मुझे अनुशासन कर रहे हैं। (ऊपर) पितः मैं सावधान हूँ, सब दुःखों को फूल की माला की भाँति ग्रहण करूँगा।

CC-0 Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

(नेपथ्य में रोने की आवाज सुन पड़ती है)

ह०—अरे अब सवेरा होने के समय मुरदा आया ! अथवा चांडाल कुल का सदा कल्याण हो, हमें इससे क्या ।

(खबरदार इत्यादि कहता हुआ फिरता है)

(नेपथ्य में)

हाय ! कैसी भई ! हाय बेटा हमे रोती छोड़ के कहाँ चले गए । हाय हाय रे !

ह०—अहह ! किसी दीन स्त्री का शब्द है, और शोक भी इसको पुत्र का है । हाय हाय ! हमको भी भाग्य ने क्या ही निर्दय और बीभत्स कर्म सौंपा है ! इससे भी वस्त्र माँगना पड़ेगा !

(रोती हुई शैव्या रोहिताश्व का मुरदा लिये आती है)

शै०—(रोती हुई) हाय बेटा ! जब बाप ने छोड़ दिया तब तुम भी छोड़ चले ! हाय ! हमारी विपत और बुढ़ौती की ओर भी तुमने न देखा ! हाय ! हाय रे ! अब हमारी कौन गती होगी ! (रोती है)

ह०—हाय हाय ! इसके पति ने भी इसको छोड़ दिया है । हा इस तपस्विनी को निष्करुण विधि ने बड़ा ही दुःख दिया है ।

शै०—(रोती हुई) हाय बेटा ! अरे आज मुझे किसने लूट लिया ! हाय मेरी बोलती चिड़िया कहाँ उड़ गई ! हाय अब मैं किसका मुँह देख के जीऊँगी । हाय ! मेरी अन्धी की लकड़ी कौन छीन ले गया ! हाय मेरा ऐसा सुन्दर खिलौना किसने तोड़ डाला ! अरे बेटा तू तो मरे पर

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

भी सुन्दर लगता है ! हाय रे ! अरे बोलता क्यों नहीं ! बेटा जल्दी बोल; देखा माँ कब की पुकार रही है ! बच्चा तू तो एक ही दफे पुकारने में दौड़ कर गले से लपट जाता था, आज क्यों नहीं बोलता।

(शव को बारंबार गले लगाती देखती और चूमती है)

ह०—हाय हाय ! इस दुखिया के पास तो खड़ा नहीं हुआ जाता।

शै०—(पागल की भाँति) अरे यह क्या हो रहा है ? बेटा कहाँ गए हो ? आओ जल्दी ! अरे अकेले इस मसान में मुझे डर लगती है, यहाँ मुझको कौन ले आया है ? रे बेटा ! जल्दी आओ। अरे क्या कहते हौ, मैं गुरु का फूल लेने गया था, वहाँ काले साँप ने मुझे काट लिया ? हाय ! हाय रे !! अरे कहाँ काट लिया ? अरे कोई दौड़ के किसी गुनी को बुलाओ जो जिलावे बच्चे को। अरे वह साँप कहाँ गया, हमको क्यों नहीं काटता ? काट रे काट, क्या उस सुकुँआर बच्चे ही पर बल दिखाना था ? हमें काट। हाय हमको नहीं काटता। अरे हिंया तो कोई साँप वांप नहीं है। मेरे लाल झूठ बोलना कब से सीखे ? हाय हाय ! मैं इतना पुकारती हूँ और तुम खेलना नहीं छोड़ते ? बेटा गुरु जी पुकार रहे हैं उनके होम की बेला निकली जाती है। देखो बड़ी देर से वह तुम्हारे आसरे बैठे हैं। दो जल्दी उनको दूब और बेलपत्र। हाय हमने इतना पुकारा तुम कुछ नहीं बोलते ! (जोर से) बेटा सांझ भई, सब विद्यार्थी लोग घर फ़िर आये, तुम अब तक क्यों नहीं आये ? (आगे शव देख कर) हाय हाय रे ! अरे मेरे लाल

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

को साँप ने सचमुच डँस लिया ? हाय लाल ! हाय मेरी आँखों के उजियाले को कौन ले गया ! हाय मेरा बोलता हुआ सुग्गा कहाँ उड़ गया ! बेटा अभी तो बोल रहे थे, अभी क्या हो गया ! हाय मेरा बसा घर आज किसने उजाड़ दिया ! हाय मेरी कोख में किसने आग लगा दी। हाय मेरा कलेजा किसने निकाल लिया। (चिल्ला चिल्ला कर रोती है) हाय लाल कहाँ गये। अरे अब मैं किसका मुंह देख के जीऊँगी रे। हाय ! अब माँ कह के मुझ को कौन पुकारेगा। अरे आज किस वैरी की छाती ठंढी भई रे। अरे तेरे सुकुँआर अंगों पर भी काल को तानिक दया न आई। अरे बेटा आँख खोलो। हाय मैं सब बिपत तुम्हारा ही मुंह देख कर सहती थी सो अब कैसे जीती रहूँगी। अरे लाल एक बेर तो बोलो ! (रोती है)।

ह०—न जाने क्यों इसके रोने पर मेरा कलेजा फटा जाता है।

शै०—(रोती हुई) हाय नाथ। अरे अपने गोद के खेलाये बच्चे की यह दशा क्यों नहीं देखते। हाय। अरे तुमने तो इसको हमें सौंपा था कि इसे अच्छी तरह पालना सो हमने इसकी यह दशा कर दी। हाय ! अरे ऐसे समय में भी आकर नहीं सहाय होते ! भला एक बार लड़के का मुँह तो देख जाओ ? अरे मैं अब किसके भरोसे जीऊँगी ?

ह०—हाय हाय ! इसकी बातों से तो प्राण मुंह को चले आते हैं और मालूम होता है कि संसार उलटा जाता है। यहाँ

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

से हट चलें। (कुछ दूर हटकर उसकी ओर देखता खड़ा हो जाता है)।

शै०-(रोती हुई) हाय! यह विपत का समुद्र कहाँ से उमड़ पड़ा! अरे छलिया मुझे छल कर कहाँ भाग गया। (देखकर) अरे आयुस की रेखा तो इतनी लम्बी है फिर अभी से यह वज्र कहाँ से टूट पड़ा। अरे ऐसा सुन्दर मुँह, बड़ी बड़ी आंख, लम्बी लम्बी भुजा, चौड़ी छाती, गुलाब सा रंग! हाय मरने के तुझमें कौन से लच्छन थे जो भगवान ने तुझे मार डाला! हाय लाल! अरे बड़े बड़े जोतसी गुनी लोग तो कहते थे कि तुम्हारा बेटा बड़ा प्रतापी चक्रवर्ती राजा होगा, बहुत दिन जीयेगा, सो सब झूठ निकला! हाय! पोथी, पत्रा, पूजा पाठ, दान, जप, होम, कुछ भी काम न आया! हाय! तुम्हारे बाप का कठिन पुन्य भी तुम्हारा सहाय न भया और तुम चल बसे! हाय!

ह०-अरे इन बातों से तो मुझे बड़ी शङ्का होती है (शव को भली भाँति देखकर) अरे इस लड़के में तो सब लक्षण चक्रवर्ती के से दिखाई पड़ते हैं! हाय! न जाने किस बड़े कुल का दीपक आज इसने बुझाया है, और न जाने किस नगर को आज इसने अनाथ किया है। हाय! रोहिताश्व भी इतना बड़ा भया होगा (बड़े सोच से) हाय हाय! मेरे मुंह से क्या अमंगल निकल गया, नारायण! (सोचता है)

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

शै०—भगवान् विश्वामित्र ! आज तुम्हारे सब मनोरथ पूरे भये ! हाय !

ह०—(घबड़ा कर) हाय हाय ! यह क्या ? (भली भाँति देखकर रोता हुआ) हाय अब तक मैं संदेह ही में पड़ा हूँ ? अरे मेरी आँखें कहाँ गई थीं जिनने अब तक पुत्र रोहिताश्व को न पहिचाना, और कान कहाँ गए थे जिनने अब तक महारानी की बोली न सुनी। पुत्र ! हा हा लाल ? हा सूर्यवंश के अंकुर ! हा हरिश्चन्द्र की बिपत्ति के एकमात्र अवलम्ब ! हाय ! तुम ऐसे कठिन समय में दुखिया माँ को छोड़ कहाँ गए। अरे तुम्हारे कोमल अंगों को क्या होगया ! तुमने क्या खेला, क्या खाया क्या सुख भोगा कि अभी से चल बसे। पुत्र स्वर्ग ऐसा ही प्यारा था तो मुझसे कहते, मैं अपने बाहु-बल से तुमको इसी शरीर से स्वर्ग पहुँचा देता। अथवा अब इस अभिमान से क्या। भगवान् इसी अभिमान का फल यह सब दे रहा है। हाय पुत्र ! (रोता है) आह ! मुझ से बढ़ कर और कौन मन्दभाग्य होगा, राज्य गया, धन जन कुटुम्ब सब छूटा, उस पर भी यह दारुण पुत्रशोक उपस्थित हुआ। भला अब मैं रानी को क्या मुँह दिखाऊँ। निस्सन्देह मुझ से अधिक अभागी और कौन होगा। न जाने हमारे किस जन्म के पाप उदय हुए हैं। जो कुछ हमने आज तक किया वह यदि पुण्य होता तो हमें यह दुःख न देखना पड़ता। हमारा धर्म का अभिमान सब झूठा था, क्योंकि कलियुग

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

नहीं है कि अच्छा करते बुरा फल मिले। निस्सन्देह मैं महा अभागा और बड़ा पापी हूं। (रङ्गभूमि की पृथ्वी हिलती है और नेपथ्य में शब्द होता है) क्या प्रलय काल आ गया? नहीं यह बड़ा भारी असगुन हुआ है। इसका फल कुछ अच्छा नहीं वा अब बुरा होना ही क्या बाकी रह गया है जो होगा। हा! न जाने किस अपराध से दैव इतना रूठा है (रोता है) हा सूर्य्यकुल आलबाल प्रवाल! हा हरिश्चन्द्र हृदयानन्द! हा शैव्या-वलम्ब! हा वत्स रोहिताश्व! हा मातृ पितृ विपत्ति सहचर! तुम हम लोगों को इस दशा में छोड़ कर कहाँ गए! आज हम सचमुच चाण्डाल हुए। लोग कहेंगे कि इसने न जाने कौन दुष्कर्म किया था कि पुत्रशोक देखा। हाय! हम संसार को क्या मुंह दिखावेंगे। (रोता है) वा संसार में इस बात के प्रगट होने के पहले ही हम भी प्राण त्याग करें। हा निर्लज्ज प्राण तुम अब भी क्यों नहीं निकलते! हा! वज्रहृदय इतने पर भी तू क्यों नही फटता! अरे नेत्रो! अब और क्या देखना बाकी है कि तुम अब तक खुले हो! या इस व्यर्थ प्रलाप का फल ही क्या है, समय बीता जाता है, इसके पूर्व कि किसी से सामना हो प्राणत्याग करना ही उत्तम बात है। (पेड़ के पास जाकर फाँसी देने योग्य डाल खोज कर उसमें दुपट्टा बाँधता है) धर्म्म! मैंने अपने जान सब अच्छा ही किया परन्तु न जाने किस कारण मेरा सब आचरण तुम्हारे विरुद्ध पड़ा, सो मुझे क्षमा करना (दुपट्टे की

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

फाँसी गले में लगाना चाहता है कि एक साथ चौंक कर) गोविन्द गोविन्द ! यह मैंने क्या अनर्थ अधर्म विचारा ! भला मुझ दास को अपने शरीर पर क्या अधिकार था कि मैंने प्राणत्याग करना चाहा। भगवान सूर्य इसी क्षण के हेतु अनुशासन करते थे। नारायण नारायण ! इस इच्छाकृत मानसिक पाप से कैसे उद्धार होगा ? हे सर्व्वान्तर्यामी जगदीश्वर क्षमा करना, दुःख से मनुष्य की बुद्धि ठिकाने नहीं रहती। अब तो मैं चांडालकुल का दास हूँ, न अब शैव्या मेरी स्त्री है और न रोहिताश्व मेरा पुत्र। चलूँ, अपने स्वामी के काम पर सावधान हो जाऊँ, वा देखूं अब दुक्खिनी शैव्या क्या करती है (शैव्या के पीछे जाकर खड़ा होता है)

शै०—(पहली तरह बहुत रोकर) हाय अब मैं क्या करूँ। अब मैं किसका मुँह देख कर संसार में जीऊँगी ! हाय मैं आज से निपूती भई ! पुत्रवती स्त्री अपने बालकों पर अब मेरी छाया न पड़ने देंगी ! हा नित्य सबेरे उठ कर अब मैं किसकी चिन्ता करूंगी ! खाने के समय मेरी गोद में बैठ कर और मुझ से मांग मांग कर अब कौन खायगा। मैं परोसी थाली सूनी देख कर कैसे प्राण रक्खूँगी ? (रोती है) हाय ! खेलते खेलते आकर मेरे गले से कौन लपट जायगा और माँ माँ कह कर तनिक तनिक बातों पर कौन रुठ करेगा। हाय मैं अब किसको अपने आंचल से मुँह की धूल पोंछ कर गले लगाऊंगी और किसके अभिमान से विपत में भी फूली फूली फिरूंगी। (रोती है) या जब रोहिताश्व हा

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

नहीं तो मैं ही जी के क्या करूँगी। (छाती पीटकर) हाय प्राण तुम अब भी क्यों नहीं निकलते। हाय मैं ऐसी स्वार्थी हूँ कि आत्महत्या के नरक के भय से अब भी अपने को नहीं मार डालती ! नहीं नहीं अब मैं न जीऊँगी। या तो इस पेड़ में फाँसी लगाकर मर जाऊँगी या गंगा में कूद पडूंगी।

(उन्मत्त की भांति उठकर दौड़ना चाहती है)

ह०—(आड़ में से)

तनहिं बेचि दासी कहवाई। भरत स्वामि आयसु बिनु पाई ॥
करु न अधर्म सोच जिय मांही। पराधीन सपने सुख नाहीं ॥

शै०—(चौकन्नी होकर) अहा। यह किसने इस कठिन समय में धर्म का उपदेश किया। सच है, मैं अब इस देह की कौन हूँ जो मर सकूं ? हाय दैव ! तुझसे यह भी न देखा गया कि मैं मर कर भी सुख पाऊँ (कुछ धीरज करके) तो चलूं छाती पर बज्र धरके अब लोकरीति करूँ। (रोती और लकड़ी चुनकर चिता बनाती हुई) हाय ! जिन हाथों से ठोंक कर रोज सुलाती थी उन्हीं हाथों से आज चिता पर कैसे रक्खूंगी। जिसके मुंह में छाला पड़ने के भय से कभी मैंने गरम दूध भी नहीं पिलाया उसे............................(बहुत ही रोती है)

ह०—धन्य देवी, आखिर तो चन्द्र सूर्य कुल की स्त्री हो; तुम न धीरज करोगी तो और कौन करेगा ?

शै०—(चिता बनाकर पुत्र के पास आकर उठाना चाहती और रोती है)

ह०—तो अब चलें उससे आधा कफन माँगे। (आगे बढ़ कर

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

और बलपूर्वक आँसुओं को रोक कर शैब्या से) महाभागे ! स्मशानपति की आज्ञा है कि आधा कफन दिये बिना कोई मुरदा फूकने न पावे, सो तुम भी पहले हमें कपड़ा दे लो तब क्रिया करो। (कफन माँगने को हाथ फैलाता है, आकाश से पुष्पवृष्टि होती है)

(नेपथ्य में)

अहो धैर्य्यमहोसत्यमहोदानमहोबलं ।
त्वया राजन् हरिश्चन्द्र सर्व्वलोकोत्तरं कृतं ॥

(दोनों आश्चर्य से ऊपर देखते हैं)

शै०—हाय ! इस कुसमय में आर्यपुत्र की यह कौन स्तुति करता है ? वा इस स्तुति ही से क्या है, शास्त्र सब असत्य हैं नहीं तो आर्यपुत्र से धर्मी की यह गति हो ! यह केवल देवताओं और ब्राह्मणों का पखंड है।

ह०—(दोनों कानों पर हाथ रख कर) नारायण नारायण ! महाभागे ऐसा मत कहो, शास्त्र, ब्राह्मण, और देवता त्रिकाल में सत्य हैं। ऐसा कहोगी तो प्रायश्चित्त होगा। अपना काम आरम्भ करो। (हाथ फैलाता है)

शै०—(महाराज हरिश्चन्द्र के हाथ में चक्रवर्त्ती का चिह्न देख कर और कुछ स्वर, कुछ आकृति से अपने पति को पहचान कर) हा आर्यपुत्र ! इतने दिन तक कहाँ छिपे थे ? देखो अपने गोद के खेलाए दुलारे पुत्र की दशा। तुम्हारा प्यारा रोहिताश्व देखो अब अनाथ की भाँति मसान में पड़ा है। (रोती है)

ह०—प्रिये ! धीरज धरो, यह रोने का समय नहीं है। देखो सबेरा हुआ चाहता है ऐसा न हो कि कोई आ जाय

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

और हम लोगों को जान ले और एक लज्जा मात्र बच गई है वह भी जाय। चलो कलेजे पर सिल रख कर रोहिताश्व की क्रिया करो और आधा कम्बल हमको दो।

शै०—(रोती हुई) नाथ! मेरे पास तो एक भी कपड़ा नहीं था, अपना आंचल फाड़कर इसे लपेट लाई हूँ. उसमें से भी आधा दे दूँगी तो यह खुला रह जायगा। हाय चक्रवर्त्ती के पुत्र को आज कफन नहीं मिलता! (बहुत रोती है)

ह०—(बलपूर्वक आँसुओं को रोक कर और वहुत धीरज धर कर) प्यारी! रो मत। ऐसे ही समय में तो धीरज और धरम रखना काम है। मैं जिसका दास हूँ उसकी आज्ञा है कि बिन आधा कफन लिये क्रिया मत करने दो। इस से मैं यदि अपनी स्त्री और अपना पुत्र समझ कर तुमसे इसका आधा कफन न लूँ तो बड़ा अधर्म हो। जिस हरिश्चन्द्र ने उदय से अस्त तक की पृथ्वी के लिये धर्म न छोड़ा उसका धर्म आध गज भर कपड़े के वास्ते मत छुड़ाओ और कफन से जल्दी आधा कपड़ा फाड़ दो। देखो सवेरा हुआ चाहता है, ऐसा न हो कि कुलगुरु भगवान सूर्य अपने वंश की यह दुर्दशा देखकर चित्त में उदास हों। (हाथ फैलाता है)

शै०—(रोती हुई) नाथ जो आज्ञा। (रोहिताश्व का मृतकम्बल फाड़ा चाहती है कि रंगभूमि की पृथ्वी हिलती है तोप छूटने का सा बड़ा शब्द और विजली का सा उँजाला होता है, नेपथ्य में बाजे की ओर वस, धन्य और जय जय

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

की ध्वनि होती है, फूल बरसते हैं और भगवान नारायण प्रगट होकर राजा हरिश्चन्द्र का हाथ पकड़ लेते हैं)

भ०—बस महाराज बस, धर्म और सत्य सब की परमावधि हो गई। देखो तुम्हारे पुण्यभय से पृथ्वी बारम्बार काँपती है, अब त्रैलोक्य की रक्षा करो। (नेत्रों से आँसू बहते हैं)

ह०—(साष्टांग दंडवत कर के रोता हुआ गदगद स्वर से) भगवन् ! मेरे वास्ते आपने परिश्रम किया ! कहाँ यह श्मशान भूमि, कहाँ यह मर्त्यलोक, कहाँ मेरा मनुष्य शरीर और कहाँ पूर्ण परब्रह्म सच्चिदानन्द साक्षात् आप ! (प्रेम के आँसुओं से और गदगद कंठ होने से कुछ कहा नहीं जाता)

भ०—(शैव्या से) पुत्री अब सोच मत कर। धन्य तेरा सौभाग्य कि तुझे राजर्षि हरिश्चन्द्र ऐसा पति मिला है। (रोहिताश्व की ओर देख कर) वत्स रोहिताश्व ! उठो, देखो तुम्हारे माता पिता देर से तुम्हारे मिलने को व्याकुल हो रहे हैं। (रोहिताश्व उठ खड़ा होता है और आश्चर्य से भगवान को प्रणाम कर के माता पिता का मुँह देखने लगता है, आकाश से फिर पुष्पवृष्टि होती है।

ह० और शै०—(आश्चर्य, आनन्द, करुणा और प्रेम से कुछ कह नहीं सकते, आँखों से आँसू बहते हैं और एकटक भगवान के मुखारविंद की ओर देखते हैं। श्रीमहादेव, पार्वती, भैरव, धर्म, इन्द्र और विश्वामित्र आते हैं। *

---

* श्री महादेव, पार्वती और भैरव का ध्यान सब को विदित है, इन्द्र और विश्वामित्र का लिख चुके हैं। धर्म चतुर्भुज, श्याम रंग,

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

सब—धन्य महाराज हरिश्चन्द्र धन्य ! जो आपने किया सो किसी ने न किया, न करेगा।

(राजा हरिश्चन्द्र, शैव्या और रोहिताश्व सबको प्रणाम करते हैं।

वि०—महाराज यह केवल चन्द्र सूर्य तक आपकी कीर्त्ति स्थिर रहने के हेतु मैंने छल किया था सो क्षमा कीजिये और अपना राज्य लीजिये।

(हरिश्चन्द्र भगवान और धर्म का मुंह देखते हैं।)

धर्म—महाराज राज आप का है इसका मैं साक्षी हूं, आप निस्सन्देह लीजिये।

सत्य—ठीक है जिसने हमारा अस्तित्व संसार में प्रत्यक्ष कर दिखाया उसी का पृथ्वी का राज है।

श्रीमहादेव—पुत्र हरिश्चन्द्र ! भगवान नारायण के अनुग्रह से ब्रह्मलोक पर्यन्त तुमने पाया तथापि मैं आशीर्वाद देता हूं कि तुम्हारी कीर्त्ति जब तक पृथ्वी है तब तक स्थिर रहे और रोहिताश्व दीर्घायु, प्रतापी और चक्रवर्त्ती होय।

पा०—पुत्री शैव्या ! तुम्हारे पति के साथ तुम्हारी कीर्ति स्वर्ग की स्त्रियां गावें। तुम्हारी पुत्रबधू सौभाग्यवती हो और लक्ष्मी तुम्हारे घर का कभी त्याग न करे।

(हरिश्चन्द्र और शैव्या प्रणाम करते हैं)

भै०—और जो तुम्हारी कीर्ति कहे सुने और उसका अनुसरण करे उसको भैरवी यातना न हो।

पीताम्बर, दण्ड, पत्र और कमल हाथ में। सत्य शुक्ल वर्ण, श्वेत वस्त्राभरण, नारायण के चारो शस्त्र हाथ में।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

इन्द्र (राजा को आलिंगन करके और हाथ जोड़ के) महाराज! मुझे क्षमा कीजिये। यह सब मेरी दुष्टता थी। परन्तु इस बात से आपका तो कल्याण ही हुआ, स्वर्ग कौन कहे आपने अपने सत्यबल से ब्रह्मपद पाया। देखिये आपकी रक्षा के हेतु श्री शिवजी ने भैरवनाथ को आज्ञा दी थी, आप उपाध्याय बने थे, नारदजी बटुक बने थे, साक्षात् धर्म ने आपके हेतु चांडाल और कापालिक का भेष लिया, और सत्य ने आप ही के कारण चांडाल के अनुचर और वैताल का रूप धारण किया। न आप बिके न दास हुए, यह सब चरित्र भगवान नारायण की इच्छा से केवल आपके सुयश के हेतु किया गया।

ह०—(गदगद स्वर से, अपने दासों का यश बढ़ाने वाला और कौन है!

भ०—महाराज। और भी जो इच्छा हो मांगो।

ह०—(प्रणाम करके गदगद स्वर से) प्रभु! आपके दर्शन से सब इच्छा पूर्ण हो गई, तथापि आपके आज्ञानुसार यह वर मांगता हूँ कि मेरी प्रजा भी मेरे साथ बैकुण्ठ जाय और सत्य सदा पृथ्वी पर स्थिर रहे।

भ०—एवमस्तु, तुम ऐसे ही पुण्यात्मा हो कि तुम्हारे कारण अयोध्या के कीट पतंग, जीव मात्र सब परमधाम जायंगे और कलियुग में धर्म के सब चरण टूट जांयगे, तब भी वही तुम्हारी इच्छानुसार सत्य मात्र एक पद से स्थित रहेगा। इतना ही देकर मुझे सन्तोष नहीं हुआ कुछ और भी मांगो। मैं तुम्हें क्या क्या दूं क्योंकि मैं तो अपने ही

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

को तुम्हें दे चुका। तथापि मेरी इच्छा यही है कि तुमको कुछ और वर दूं। तुम्हें वर देने में मुझे सन्तोष नहीं होता।

ह०—(हाथ जोड़कर) भगवान! मुझे अब कौन इच्छा है? मैं और क्या बर मांगू तथापि भरत का यह वाक्य सुफल हो—

"खलगनन सों सज्जन दुखी मत होइँ, हरिपद रति रहै।
उपधर्म छूटैं. सत्व निज भारत गहै, करदुख बहै॥
बुध तजहिं मत्सर, नारि नरसम होहिं, बस जग सुख लहै।
तजि ग्राम कविता सुकविजन की अमृत बानी सब कहै॥"

[पुष्पवृष्टि और बाजे की ध्वनि के साथ जवनिका गिरती है]

इति श्री सत्यहरिश्चन्द्र नाटक सम्पूर्ण हुआ।

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri

CC-0.Courtesy Government District Library Varanasi. Digitized by eGangotri